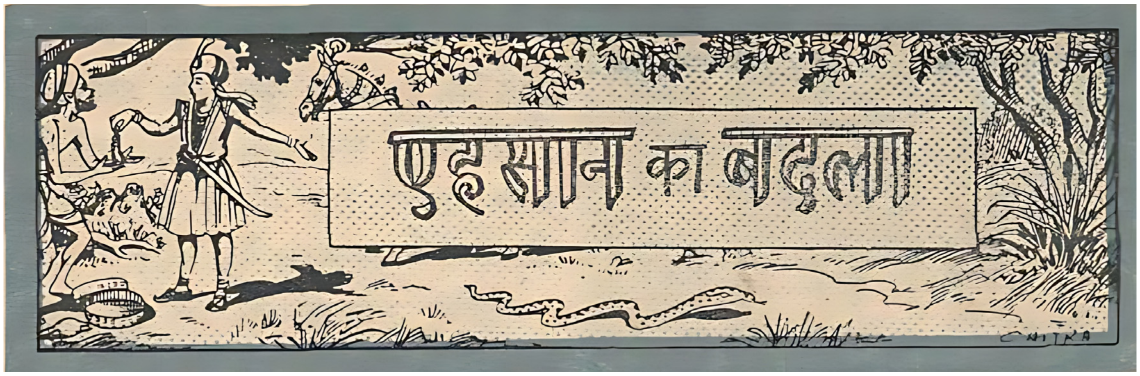

चन्दामामा
माँ-बच्चों का मासिक पत्र
1st MAY. '52
6



बिन्ध्याचल के समीप एक छोटा सा गाँव था। उस गाँव में एक सँपेरा रहता था। वह एक दिन जङ्गल गया और एक बाँबी के पास तूम्बी बजाने लगा। उस नाद को सुनते ही बाँबी से एक साँप बाहर आया। वह साँप उसका गाना सुन कर अपनी सुध-बुध भूल गया और फन फैला कर नाचने लगा। बस, उस सँपेरे ने उसको पकड़ कर अपनी पिटारी में डाल लिया।

पिटारी में कैद होने के बाद साँप बहुत पछताने लगा और सोचने लगा कि कैसे इस पिटारी से उसे छुटकारा मिलेगा ? इतने में कृपा-सागर नामक एक जागीरदार उधर शिकार खेलने आया और सँपेरे को देख कर बोला-"भई ! तुम्हारी पिटारी में क्या है ?" "हुजूर ! मैंने एक बड़ा काला नाग पकड़ा है। देखिएगा ?" यह कह कर सँपेरे ने पिटारी खोल कर दिखा दी।

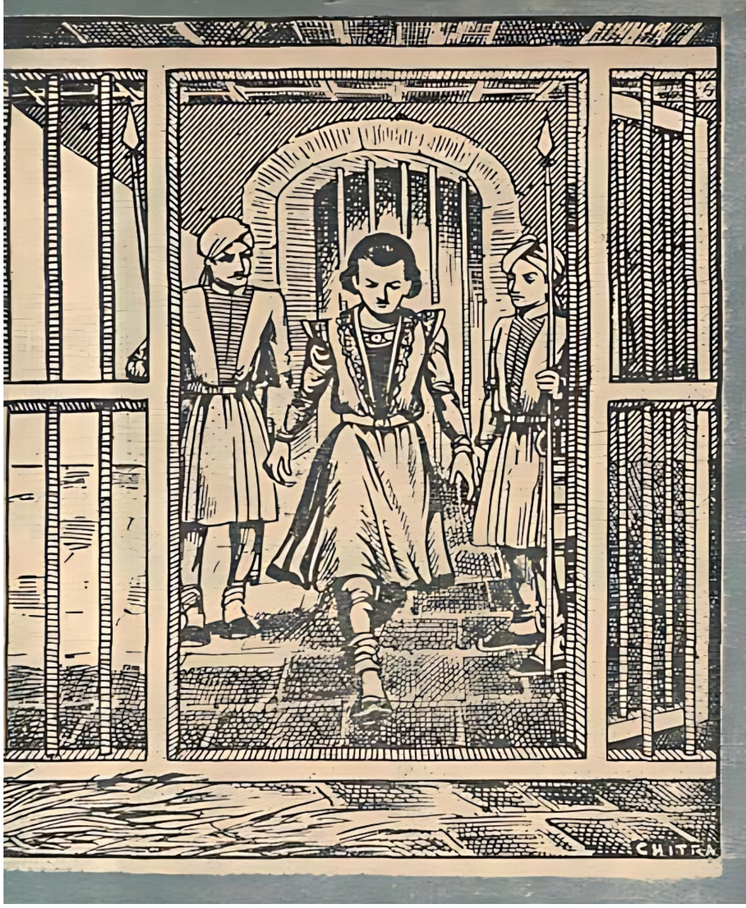
मौका पाकर साँप ने उस जागीरदार से विनती की-"सरकार ! देखिए, इस निर्दयी ने मुझे छल से पकड़ कर कैद में डाल दिया है। अब मैं जङ्गल में स्वच्छन्द होकर घूम-फिर नहीं सकूँगा। क्या आप मुझे इस कैद से छुटकारा नहीं दिला देंगे ?

उस जागीरदार का दिल बहुत दयालु था। उसने सँपेरे से कहा-"भई ! इस साँप को छोड़ दो ! उसे अपनी राह जाने दो !

तब सँपेरे ने कहा-"हुजूर ! इस साँप को गाँव में ले जाकर, घर घर नचाए बगैर मेरी रोजी नहीं चलेगी ! क्या आप इसे छोड़ देने का हुक्म देकर मेरे मुँह का कौर छीन लेना चाहते हैं ?"

"ऐसी बात है तो यह मोतियों का हार ले जाओ और इसे बेच कर अपनी गरीबी दूर कर लो। अब तो साँप को छोड़ देने में तुझे कोई उज्र न होगा !" कृपा-सागर ने

कुमारी शीला



यह कह कर अपने गले का हार निकाल कर उसके हाथ में डाल दिया !

सँपेरे ने निश्चिन्त होकर उस साँप को छोड़ दिया और मोती की माला लेकर खुशी- खुशी अपनी राह पकड़ी।

साँप ने अपना फन नवा कर कृपा-सागर को प्रणाम किया और कहा- "सरकार ! आज आप ने मेरा जो एहसान किया उसे मैं कभी न भूलूँगा। कभी न कभी इसका बदला जरूर चुका दूँगा।" यह कह कर साँप पल भर में आँखों से ओझल हुआ। कृपा-सागर भी शाम होते ही घर लौट गया।

* * * * * *

कुछ दिन बीत गए। कुछ दूसरे जागीरदारों ने, जिनकी कृपा-सागर से बनती नहीं थी, जाकर उसके ऊपर राजा से चुगलियाँ खाई और दोनों में मन-मुटाव पैदा कर दिया।

उन्होंने राजा से कहा कि कृपा-सागर अकसर बिन्ध्याचल के नजदीक के जङ्गल में जाता है। वह वहाँ भीलों के साथ मिल कर उन्हें राजा के प्रति बगावत करने को उकसा रहा है। इस तरह झूठ-मूठ की बातें बना कर उन्होंने राजा का मन कृपा-सागर की तरफ से खट्टा कर दिया। राजा ने किसी बहाने कृपा-सागर को कैद कर लिया और जेल में डाल दिया।

"अरे ! मैंने कौन सा जुर्म किया जो मुझे यह सज़ा मिली।" कृपा-सागर ने सोचा और किसी तरह गिन गिन कर दिन काटने लगा। एक दिन की बात है कि आधी रात के वक्त उसे अपनी कोठरी में कोई आहट सुनाई दी। उसने उठ कर देखा तो एक साँप आ रहा था। उस साँप ने फन उठा कर कृपा-सागर से कहा-"सरकार ! आप मुझे भूल गए ? मैं वही साँप हूँ, जिसे एक दिन आप ने सँपेरे की कैद से छुटकारा दिया था।"



"अच्छा! तुम यहाँ कैसे आए ? पहरे-दार देख लेंगे तो नाहक जान से हाथ धो बैठोगे ! चले जाओ !" कृपा-सागर ने कहा।

"मैं किसी की परवाह नहीं करता सरकार ! उस दिन आप ने मेरी कैद छुड़ाई थी। इसलिए आज मैं आप को कैद से छुड़ाने आया हूँ।" उस साँप ने कहा।

"अरे नादान ! तू मुझे क्या छुड़ाएगा ! मेरे दुश्मनों ने राजा के कानों में जो जहर डाल दिया उसका कोई इलाज नहीं ! तेरे दाँतों में जो जहर है वह भी उसकी बराबरी नहीं कर सकता।" कृपा-सागर ने कहा। तब साँप ने जवाब दिया-"सरकार ! आप जो कहते हैं वह सच है। लेकिन आपको मैं बचा सकता हूँ। दुनियाँ में तदबीर से क्या नहीं हो सकता ? मैंने आपको जेल से छुड़ाने के लिए एक अच्छी तदबीर सोच ली है !"

"वह तदबीर क्या है ?" कृपा-सागर ने पूछा।

"पौ फटने के पहले ही मैं राजा के अन्तःपुर में पहुँच जाऊँगा और उसके जगने के पहले ही गले से लिपट जाऊँगा। जब राजा चिल्लाएगा तो उसके नौकर भाला-बर्छी लेकर दौड़े आएँगे ! मैं राजा के गले में लिपटा रहूँगा ! मुझे मारने से राजा की जान चली जाएगी। इसलिए किसी को मुझ पर वार करने का साहस न होगा। तब वे खोजने लगेंगे कि क्या कोई ऐसा आदमी नहीं है जो जादू करके इस साँप को मोह ले जाए और राजा की जान बचाए। तब आप कहिएगा कि मैं साँप को मोह कर राजा को बचा सकता हूँ। क्योंकि

मैं जादू जानता हूँ। इस तरह राजा के प्राण बचाते ही आपको वह बहुत मानने लगेगा।" इतना कह कर साँप वहाँ से चला गया।

दूसरे दिन तड़के ही राजा के अन्तःपुर में खलबली मच गई। कृपा-सागर ने पहरेदारों से सारा माजरा जान लिया और कहा कि मैं राजा की जान बचा सकता हूँ।

पहरेदारों ने यह बात जाकर अन्तःपुर में पहुँचा दी। तुरन्त वे लोग आए और कृपा-सागर को जेल से छुड़ा कर सीधे राजा के सामने ले गए। "भैया ! कृपा-सागर ! अपने मन में कोई मैल न रखो कि मैंने तुम्हें कैद में डाल दिया। मुझ पर कृपा करो और इस सर्प-सङ्कट से बचाओ।" राजा ने थर-थर काँपते हुए कहा।

फन फैला कर क्रोध के मारे फुफकार मारते हुए साँप को देख कर कृपा-सागर ने प्रणाम किया। फिर सिपाहियों और दरबारियों से कहा-"मैं इस सर्पराज को बिदा कर दूँगा और राजा पर कोई आँच न आने दूँगा। लेकिन आप लोग पहले यह वचन दें कि कोई इस पर हाथ न उठाएगा।"

यह सुन कर सब लोगों ने अपनी-अपनी लाठियाँ और तलवारें दूर फेंक दीं। तब कृपा-सागर ने साँप की तरफ देखते हुए कुछ मन्त्र पढ़े और चुटकी बजा कर कहा-"हे सर्पराज ! बिन्ध्याचल के जङ्गलों में महावट के नीचे तुम्हारी बाँबी है। तुम सीधे वहाँ चले जाओ !"

उसके मुँह से इन शब्दों के निकलने भर की देर थी कि वह साँप राजा का गला छोड़ कर उतरा और वेग से ऐंडता हुआ वहाँ से ओझल हो गया।

राजा ने कृपा-सागर के पैरों पर गिर कर माफी माँगी और अपना एहसान ज़ाहिर किया। अपने अपराध का प्रायश्चित्त करने के लिए उसने उसे एक बड़ी जागीर देकर अनेक तरह के सत्कार किए और हमेशा उसका कृतज्ञ बना रहा।

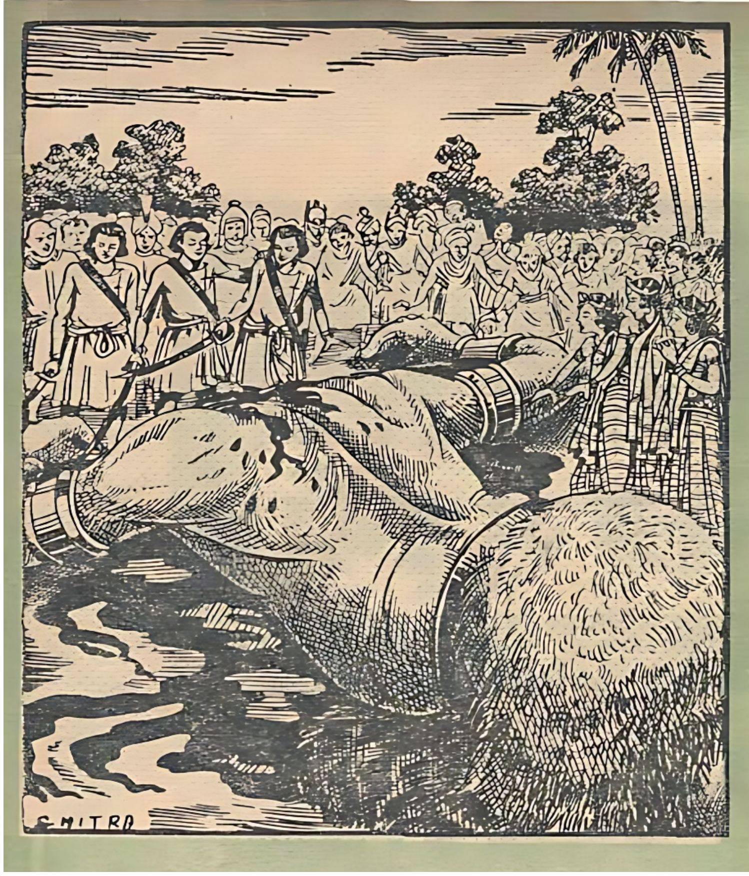




राक्षस को चकमा देकर जुड़वाँ भाई किसी तरह निकल भागे। लेकिन उनके मन को चैन न हुआ। क्योंकि अब उनके पास वह सफेद बुकनी नहीं थी जिसके प्रभाव से वे पहले राक्षस की आँखों में धूल झोङ्क कर अदृश्य हो जाते थे ! वे भी हंसों का रूप बना कर राजकुमारियों के साथ सरोवर में रह तो सकते थे। लेकिन मुश्किल यह थी कि सरोवर के हंसों की संख्या राक्षस को मालूम थी। वे तुरन्त पकड़े जाते ! इसलिए उन्होंने सोचा कि अब क्या किया जाए! इन चिन्ताओं के मारे जुड़वें भाइयों का समय बड़ी मुश्किल से कटने लगा।

एक दिन सुहासिनी ने उनसे कहा- "अब यहाँ रहने में तुम लोगों की खैर नहीं ! क्योंकि राक्षस मन ही मन तुम लोगों से खार खाए, घात में बैठा होगा। इस बार उसके हाथों में फँसोगे तो छूट नहीं पाओगे ! इसलिए कल जब वह नाच देखने आएगा, उस समय तुम लोग मौका देख कर भाग जाओ ! अब हमारी रक्षा करने की आशा छोड़ दो !"

यह सुन कर उदय ने कहा- "यह कभी नहीं हो सकता ! बदन में जान रहते हम



सरोवर में और भी राजकुमार हैं न ? उन्हें क्यों न बुला लिया जाय ? ज़रा चहल-पहल रहेगी और महफिल में रौनक आएगी।"

"इतनी सी बात के लिए मुझसे कहने की क्या जरूरत है ? बुला लो न उन्हें ?" राक्षस ने जवाब दिया।

तुरन्त सरोवर में जितने हंस थे सब किनारे आकर मनुष्य रूप धारण कर खड़े हो गए। जुड़वाँ भाई भी उन में शामिल हो गए थे। लेकिन नाच-गान में भूले हुए राक्षस का ध्यान उन पर नहीं गया।

राजकुमारियाँ मनोहर मुद्रा बना कर नाचने लगीं। राक्षस उनका नाच देखने में सब कुछ भूल गया था। ऐसे मौके में उदय ने म्यान से तलवार निकाली और एक ही वार में उसका सिर धड़ से जुदा कर दिया। बस, धड़ धड़ाम से नीचे गिर पड़ा और सिर लुढ़कता हुआ सरोवर में जाकर गिरा। उसके खून की धारा के आ मिलने से सरोवर का सारा पानी लोहू के रङ्ग का हो गया।

उसी समय और एक तमाशा हुआ। ज्यों ही इधर राक्षस गिर कर मर गया त्यों ही इधर उससे रक्षित माया-महल भी अदृश्य हो गया। सिर्फ वहाँ उन अन्य राजकुमारों की, जो

लोग तुम्हें यहाँ छोड़ कर नहीं जा सकते !"

"अच्छा ! तो सुनो ! हम एक उपाय बताती हैं। कल जब राक्षस नाच-गान देखने आएगा तो हम ऐसा इन्तज़ाम करेंगीं कि हमारे साथ सरोवर में हंसों के रूप में रहने वाले सभी राजकुमार आकर उस में भाग लें। तुम तीनों समय पाकर उस जत्थे में मिल जाना। फिर अच्छा मौका देख कर राक्षस का सिर काट लेना।" उसने कहा।

जुड़वें भाइयों ने उसकी बात मान ली। दूसरे दिन जब राक्षस नाच-गान देखने आया तो सुहासिनी ने उससे कहा-"इतनी लड़कियों के बीच में तुम अकेले मरद सुहाते नहीं।

जुड़वाँ भाइयों की ही तरह आकर राक्षस के चंगुल में फँस गए थे, पत्थर की मूरतें बच रहीं। तब सुहासिनी ने कहा-"और खड़े क्या देखते हो ? जल्दी से मन्त्र-जल ले आओ और उन पत्थर की मूरतों पर छिड़क कर उन्हें असली रूप दो।" वैसा करते ही सब मूरतें राजकुमार बन गई। उन में छोटे-बड़े सब तरह के लोग थे।

उन सबने जुड़वाँ भाइयों और राज-कुमारियों की बहुत प्रशंसा की ! इस तरह अचानक जादू की कैद से छुटकारा पाकर वे फूले न समाए। लेकिन इतने आनन्द में भी उन्हें एक फिक्र थी ही। वह यह कि अपने अपने घर कैसे पहुँचें और जब तक वैसा मौका नहीं मिले तब तक इस जगह राक्षस से छुप कर समय कैसे काटें ?

इसलिए उन सबने एकत्र होकर इस विषय में बहुत माथा-पच्ची की। लेकिन किसी को कोई उपाय न सूझा ! अन्त में उदय ने कहा-"तुम लोगों का यहाँ रहना ठीक नहीं ! इन सब राजकुमारियों को हिफाजत से घर पहुँचाने का जिम्मा लेते हैं। इसलिए तुम लोग निश्चिन्त होकर अपने अपने घर लौट सकते हो !"





लेकिन वे इसके लिए राज़ी न हुए। उनमें से एक बूढ़े ने कहा-"बेटा ! हमारे घर लौटने में बहुत सी कठिनाइयाँ हैं। दाढ़ी वाले से जान बचा कर भागना टेढ़ी खीर है। सबसे आसान तो यह होगा कि तुम हम लोगों को फिर पत्थर की मूरतें बना दो !"

अन्त में जुड़वाँ भाइयों को उनकी बात माननी ही पड़ीं। उन लोगों की इच्छा के अनुसार ही भाइयों ने सब को फिर पत्थर की मूरतों में बदल दिया।

अब वे सोचने लगे कि हम क्या करें? इतने में राक्षस आ गया। इस बार वह खाली हाथ नहीं लौटा था। एक राजकुमारी को पकड़ लाया था। उसके आने की आहट सुन कर जुड़वाँ भाइयों को कुछ न सूझा तो दौड़ कर सरोवर में कूद पड़े और हंस बन गए।

दूसरे ही क्षण राक्षस सरोवर के किनारे आ धमका। उसने राजकुमारी को उठा कर सरोवर में फेंक दिया। वह भी तुरन्त हंस बन गई।

इस तरह उस राजकुमारी को सरोवर में फेंक देने के बाद राक्षस हंसों को गिनने लगा ! आज तक वह सोचा करता था कि सरोवर में कुल हंस सैंतालीस मात्र हैं और अपना व्रत पूरा करने के लिए उसे अभी तीन हंसों की और ज़रूरत है। आज साथ लाई राजकुमारी को मिला कर कुल अड़तालीस हंस होने थे। लेकिन वहाँ पूरे इकावन हंस निकले। बस, वह खुशी से उछल पड़ा। लेकिन दूसरे ही क्षण उसके मन में शक पैदा हो गया। इसलिए उसने सब हंसों को किनारे बुलाया। ज्यों ही वे किनारे आए उनको मामूली रूप मिल गया। राक्षस ने गरज कर पूछा-"तुम लोगों में से कौन तीन नए आए हो ?"

यह सुनते ही जुड़वाँ भाइयों ने आगे बढ़ कर कहा-" हम नए आए हैं !

लेकिन पहले तुम यह बताओ कि और कितने दिनों तक इन मासूम लड़कियों को इस तरह कैद कर रखोगे ? सुनो, अब भी कुछ बिगड़ा नहीं। इन लोगों को झट छोड़ दो ! नहीं तो तुम्हारे भाई की जो हालत हुई, वही तुम्हारी भी होगी।" उन्होंने उसे धमकाया।

"क्या कहा ? मेरे भाई की क्या हाल हुई? वह कहाँ है ?" राक्षस अब क्रोध से चिल्लाया।

"कहाँ है वह ! मिट्टी में मिल गया है और उसके साथ तुम्हारा माया-महल भी !" यों जुड़वाँ भाई बोल ही रहे थे कि राक्षस उल्टे पाँव तीर की तरह माया-महल की ओर दौड़ा ! लेकिन इस बीच में जुड़वाँ भाई बाग में चले गए और जादू के आम खाकर बन्दर बन गए। अब उन बन्दरों को राक्षस पकड़ नहीं सकता था। वे एक पेड़ से दूसरे पर कूदते-उछलते हुए उसे खूब हैरान करने और चिढ़ाने लगे।

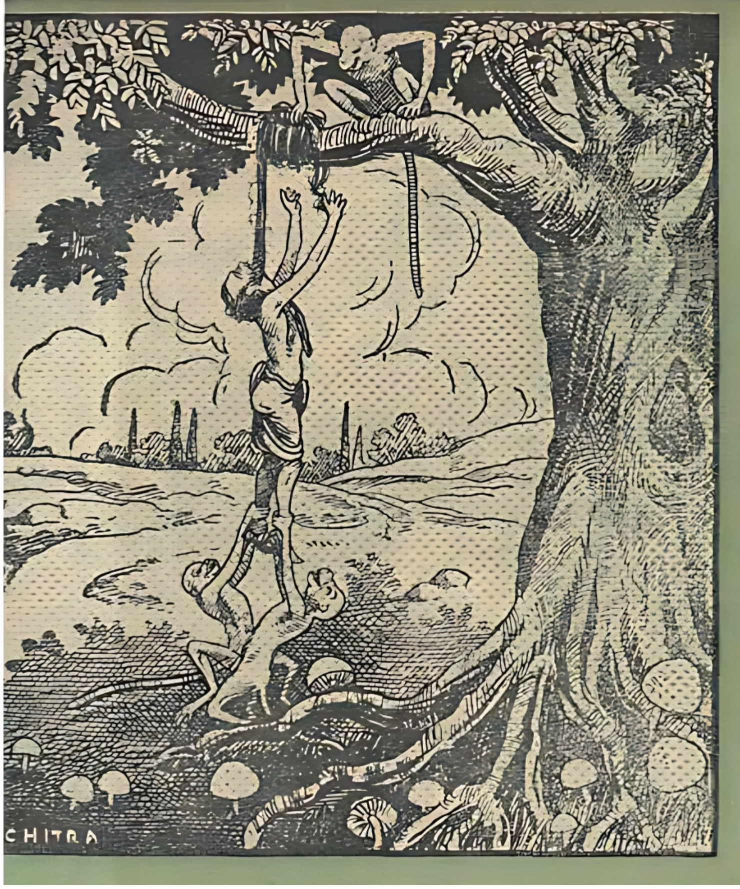
आखिर राक्षस परेशान हो गया और बोला-"अच्छा, देखता हूँ, कि यहाँ से बच कर कैसे भागते हो !" यह कह कर वह गिद्ध बन कर तेज़ी से आसमान में उड़ कर गायब हो गया।



थोड़ी देर बाद बन्दरों के रूप में उछलते-कूदते हुए जुड़वाँ भाइयों के सामने दाढ़ी वाला बौना आ खड़ा हो गया।

बन्दरों को देखते ही उसने कहा-"अच्छा हुआ ! नहीं तो इतना गरूर ! खैर समझ लो कि जान बच गई !"

वह यों कह ही रहा था कि एक बन्दर एकाएक उसके सर पर कूद पड़ा। उसके देखने के पहले ही एक दूसरे बन्दर ने उसकी दाढ़ी पकड़ ली और घसीट ले जाने लगा। तीसरा बन्दर, जो बड़ा मज़बूत



मालूम होता था, उसके पैर पकड़ कर लटक गया ! दाढ़ी वाला अब "हाय ! हाय !" करने लगा। लेकिन बन्दरों ने उसे छोड़ा नहीं। दाढ़ी पकड़ा हुआ बन्दर उसे एक पेड़ के पास खींच ले गया। उसने उसकी दाढ़ी एक डाल से कसके बाँध दी ! अब दाढ़ी वाला पेड़ से झूलने लगा। तब तीनों बन्दरों ने उस पेड़ के नीचे उगे हुए एक-दो कुकुरमुत्ते खाए और अपने असली रूप में आ गए।

दाढ़ी वाले ने गिड़गिड़ा कर कहा-"मुझे नहीं मालूम था कि यहाँ के सभी पेड़-पौधों के गुण तुम्हें मालूम हैं। मुझ से चूक हो गई जो मैंने बीच में अपनी टाँग अड़ाई ! माफ करो !"

"नहीं, इस बार हम तुम्हें इतनी आसानी से नहीं छोड़ेंगे; पहले सौगन्ध खा लो कि 'अब मैं राक्षस का सेवक नहीं रहा। तुम लोगों का सेवक हो गया।' आज से हम जो कुछ कहेंगे तुम्हें करना होगा। अपनी जादू की माला हमें दे दो ! इतना ही नहीं; राक्षस का राज जो कुछ तुम्हें मालूम है हमें बता दो। जब तुम यह सब मान लोगे तभी तुम्हें छोड़ेंगे। नहीं तो जिन्दगी भर इसी तरह झूलते रहोगे !" उदय ने उसको धमकाते हुए कहा।

तब दाढ़ी वाले ने कहा-"भैया ! तुम जैसा कहोगे करूँगा ! तुम्हारी नौकरी करने में मुझे कोई उज्र नहीं। माला भी दे दूँगा। लेकिन राक्षस का राज़ मुझसे न पूछो। मैंने तो पहले ही कह दिया था कि राक्षस का राज़ बताऊँगा तो मेरे सिर के सौ टुकड़े हो जाएँगे और मैं मर जाऊँगा। बताओ तुम्हीं ? मुझसे खिदमत कराना चाहते हो या राक्षस का राज़ कहलवा कर मार डालना चाहते हो? यही नहीं,

धुन के साथ पीछे लग जाओगे तो राक्षस का राज़ तुम खुद ही जान जाओगे !" यह कह कर उसने अपने गले की माला निकाल कर उन्हें दे दी ! उदय ने उसे लेकर अपने गले में डाल लिया। बस, उदय दाढ़ी वाला बौना बन गया और बौना मामूली आदमी बन गया। साथ ही उदय को अब अञ्जन, भस्म, तौलिया वगैरह भी मिल गए !

झट उदय ने सरोवर के किनारे जाकर सब हंसों को बुलाया। वे सब बाहर आए और कतार बाँध कर खड़े हो गए। तुरन्त सभी राजकुमार और राजकुमारियाँ बन गए । अपने जादू के तौलिए के प्रभाव से उदय ने उनकी खूब दावत की । फिर उसने पत्थर की मूरतें बने हुए राजकुमारों को भी उनका असली रूप दे दिया। फिर उनको भी उसने एक दावत दी!

अन्त में उसने बौने से कहा-"इन सब को ले जाकर झट अपने अपने घर में छोड़ आओ !"

तब दाढ़ी वाले ने कहा-"यह बड़ा मुश्किल काम है। कहीं राक्षस को मालूम हो गया तो फिर जान नहीं



बचेगी ! कुछ दिन तक इनको हंसों और पत्थर की मूरतों के रूप में यहीं रहने दो ! मौका पाकर एक एक को मैं घर पहुँचा दूँगा।"

जुड़वाँ भाइयों ने उसकी बात मान ली और उन सबको हंसों और पत्थर की मूरतों का रूप देकर कुछ समय के लिए अपनी अपनी जगह पहुँचा दिया।

इतने में राक्षस वापस आ गया। यह जान कर उदय ने तुरन्त बुकनी निकाली और अपने भाइयों और दाढ़ी वाले बौने पर छिड़क दी। वे अदृश्य हो गए। राक्षस

जब वहाँ आया तो उसे सिर्फ़ उदय ही दाढ़ी वाले बौने के रूप में दिखाई दिया। राक्षस ने समझा कि वह उसका पुराना नौकर बौना ही है। उसने पूछा-"ये बन्दर सब कहाँ चले गए ?"

"मुझसे बच कर जाएँगे कहाँ ? मैंने उनको गला घोंट कर मार डाला !" उदय ने जवाब दिया।

"कहाँ पड़े हुए हैं वे ?" राक्षस ने उतावली के साथ पूछा।

"आओ, दिखा दूँ !" कह कर उदय राक्षस को एक सूखे कुँए के पास ले गया। "झाँक कर देखो तो ?" उसने राक्षस से कहा।

राक्षस ने कुँए में झाँक कर देखा। इसके पहले ही उदय ने उस कुँए के किनारे अपनी तलवार छिपा कर रख दी थी।

अब उसने वह तलवार निकाल ली और एक ही वार में राक्षस का सिर काट लिया। कटा हुआ सिर कुँए में जा गिरा ! लेकिन आश्चर्य ! तुरन्त राक्षस की गरदन पर और एक सिर निकल आया।

राक्षस ने पीछे मुड़ कर उदय को (जो दाढ़ी वाले बौने के रूप में था) अपनी मुठ्ठी में पकड़ कर उठा लिया।

"नमक हराम कहीं का ! जिस पत्तल में खाता है उसी में छेद करना चाहता है ?" यह कह कर उसने उसे उठा कर कुँए में फेंक दिया।

[यों कुँए में गिरने के बाद उदय की क्या हालत हुई ? क्या राक्षस को उसका भेद मालूम हो गया ? बुकनी के प्रभाव से अदृश्य बने हुए दोनों भाइयों और दाढ़ी वाले बौने का क्या हाल हुआ ? ये सब बातें अगले अङ्क में जान लीजिए !]





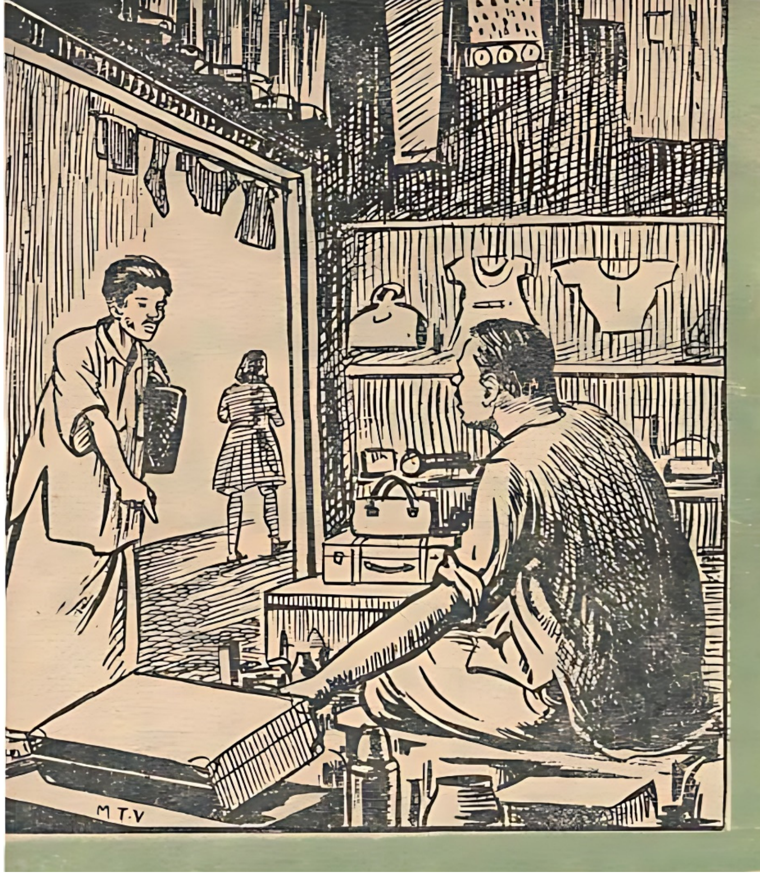
संयोग से

मद्रास में एक बहुत बड़ा कारखाना था। उसमें हर रोज़ कई सौ मज़दूर काम किया करते थे। उन मज़दूरों को हर हफ्ते शनीचर के दिन हफ्ते भर की मजूरी दी जाती थी। उन सब लोगों की हफ्ते भर की मजूरी की रकम सात हज़ार रुपए होती थी। मालिक हर शनीचर को दस बजे दिन में इस रकम के लिए हुण्डी लिख कर कल्लनराम नामक अपने गुमाश्ते को दे देता और बैंक में भुना लाने को भेजता। कल्लनराम साईकिल पर चढ़ जाता और चमड़े की एक थैली ले जाकर बैंक के नए नोट उसमें रख कर ले आता और हिफाज़त से मालिक को सौंप देता।

कल्लनराम को उस कारखाने में गुमाश्ते का काम करते दस बरस हो गए थे। उस पर मालिक को बहुत भरोसा था। हाल ही में उन्होंने उसकी तनख्वाह बढ़ा कर सौ से एक सौ पच्चीस कर दी थी। एक शनीचर को जब कल्लनराम अपने दस्तूर के मुताबिक बैंक से रुपया ला रहा था तो उसके दिमाग में एक अजीब ख्याल पैदा हुआ। वह ख्याल पैदा हुआ था शाम के अखबार में एक सनसनीखेज खबर पढ़ने की वजह से। उसने पढ़ा था कि कलकत्ते में उसी की तरह एक आदमी बैंक से रुपया ला रहा था। राह में दो डाकुओं ने उसे रोक कर रुपयों की थैली छीन लेनी चाही। जब वह खींचा-तानी करने लगा तो उन लोगों ने एक बन्दूक से उसे गोली मार दी और रुपए लेकर भाग गए। यही सारांश था उसकी पढ़ी हुई खबर का।

अगर मैं हल्ला मचा दूँ कि किसी ने मुझे भी यों ही राह में रोक लिया और रुपए लूट लिए तो क्या होगा ? और क्या होगा ? लोग विश्वास कर लेंगे। क्योंकि ऐसी डकैतियाँ आजकल बहुत जगह हो रही हैं। फिर मुझ

सदानन्द



पर सब लोगों को, और खास कर मेरे मालिक को बहुत भरोसा है।" उसने मन में सोचा। बस, जब से यह ख्याल मन में पैदा हुआ, तब से कल्लनराम की नींद हराम हो गई। अगला शनीचर भी आया। हुण्डी उसके हाथ आई।

बैंक और फ्याक्टरी के बीच में ही सेन्ट्रल स्टेशन पड़ता था। उस स्टेशन में मुसाफिरों के सामान रखने के लिए एक कमरा था। हर सामान के लिए दो आने रोज़ देने पर रेलवे वाले वहाँ सामान रखने देते थे।

कल्लनराम ने हुण्डी भुनाई। रुपए लेकर वह साईकिल पर चढ़ा और जल्दी-जल्दी सेन्ट्रल स्टेशन की बगल के मूर-बाज़ार में गया। वहाँ उसने पुरानी चीजें बेचने वाली एक दूकान में घुस कर एक पुराना सूटकेस खरीदा और नोटों के बण्डल उसमें ठूँस दिये। फिर वहीं एक ताला भी खरीद कर उसने इस पेटी में ताला लगा दिया और उसे सेन्ट्रल स्टेशन में ले गया। वहाँ उसने दो आने देकर सामान-घर में पेटी सौंप दी और रसीद ले ली। फिर वह बाहर आकर एक गली में गया। वहाँ उसने अपनी थैली में कङ्कड़-पत्थर भर दिए और उसे एक नाले में फेंक दिया। थैली पानी में गिर कर कङ्कड़ों की वजह से तुरन्त डूब गई। फिर उसने कपड़े-लत्ते फाड़ लिए, सर के बाल बिखेर लिए और रोते-धोते कारखाने में घुसा।

वहाँ वह सीधे मालिक के कमरे में दौड़ता हुआ गया और बोला-"हाय! हाय! मैं लुट गया। चार हट्टे-कट्टे डकैतों ने मुझे जबदस्ती रोक लिया और डरा कर रुपयों की थैली छीन कर भाग गए।" उसने ऐसी रोनी सूरत बनाई थी कि देखते ही उस पर विश्वास हो जाता था। उसका मालिक यह सुन कर हक्का-बक्का

रह गया। "रुपया जो गया सो तो गया। खैर यही है कि उन लोगों ने तुम्हें जान से छोड़ दिया।" यह कह कर उसने कल्लनराम को धीरज बँधाया और तुरन्त पुलिस को फोन किया।

घण्टे भर में थानेदार ने आकर पूछ-ताछ की। उसने कल्लनराम से बहुत से सवाल किए। लेकिन गुमाश्ते ने सब सवालों का बेखटके जवाब दिया।

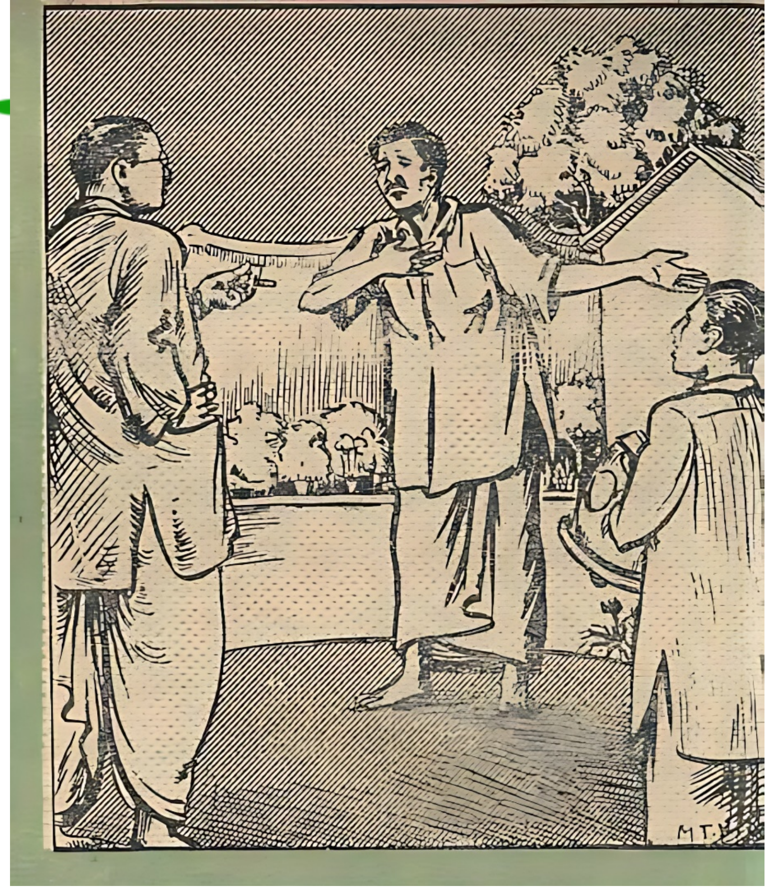
अन्त में जाते वक्त थानेदार ने मालिक से एकान्त में कहा-"जनाब ! कहीं आपका गुमाश्ता स्वाँग तो नहीं रच रहा है ? आप को इस पर भरोसा है ?"

तब मालिक ने कहा-"नहीं साहब ! कल्लनराम बड़ा लायक आदमी है। वह मेरा दायाँ हाथ है।"

"तब तो ठीक है !" कह कर थानेदार चला गया।

बाकी लोगों ने भी कल्लनराम को बहुत तसल्ली दी। उसको सोच में डूबा हुआ देख कर मालिक ने उस दिन उसे समय से पहले ही घर चले जाने की इजाज़त दे दी।

कल्लनराम ने घर जाकर कपड़े बदल लिए और तुरन्त सेन्ट्रल स्टेशन की तरफ चला।



राह में वह सोचने लगा। "कुल सात हज़ार से कुछ ज्यादा ही होंगे। मैं उनमें से अभी एक पैसा भी नहीं छुऊँगा। सारी रकम से सोना खरीद कर किसी जगह गाड़ दूँगा। जब पाँच छः बरस बाद सब लोग इस घटना को भूल जाएँगे तो मैं किसी बहाने यह नौकरी छोड़ दूँगा और किसी दूसरी जगह जाकर रोज़गार कर लूँगा। नहीं तो ज़मीन खरीद कर खेती ही शुरू कर दूँगा।" यों हवाई महल बनाता हुआ वह सेन्ट्रल स्टेशन जा पहुँचा।

वहाँ जाकर उसने रेलवे नौकर को रसीद दी और अपनी पेटी माँगी। "क्या यही आपकी पेटी है ?" नौकर ने

उसकी तरफ अजीब ढङ्ग से देखते हुए पूछा। "हाँ !" कह कर कल्लनराम ने पेटी ले ली और बगल में दबा कर दो कदम बढ़ाए कि इतने में पीछे से किसी ने उसके कन्धे पर हाथ रख दिया। उसने पीछे फिर कर देखा तो पुलिस वाला था।

"क्या बात है ? क्या चाहते हो ?" कल्लनराम ने उसे धमकाते हुए पूछा।

"यह पेटी तुम्हें कहाँ मिल गई ?" पुलिस वाले ने पूछा।

"कहीं क्यों मिलेगी ? यह मेरी पेटी है।" कल्लनराम ने कहा।

"क्या सिर्फ कह देने से तुम्हारी हो गई यह पेटी ? यह पेटी 'किशोरलाल' नाम के एक सोने चाँदी के व्यापारी की है। विश्वास न हो तो देख लो, उस कोने में उसका नाम लिखा हुआ है छोटे अक्षरों में। रेल में सफर करते वक्त उनसे चुरा ली थी तुमने यह पेटी। है न!" पुलिस वाले ने कहा।

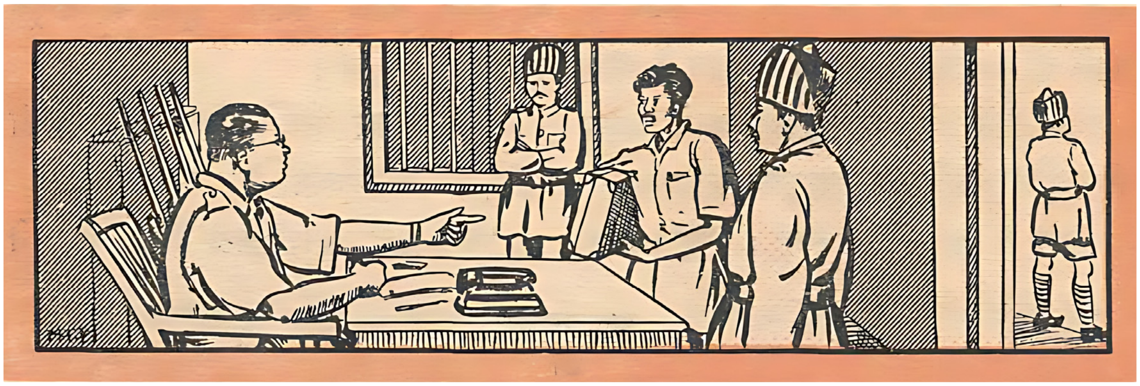
"सच कहता हूँ, मैंने कभी किशोरलाल का नाम भी नहीं सुना। मैंने यह पेटी पैसा देकर खरीदी है।" कल्लनराम ने हल्ला मचाया।

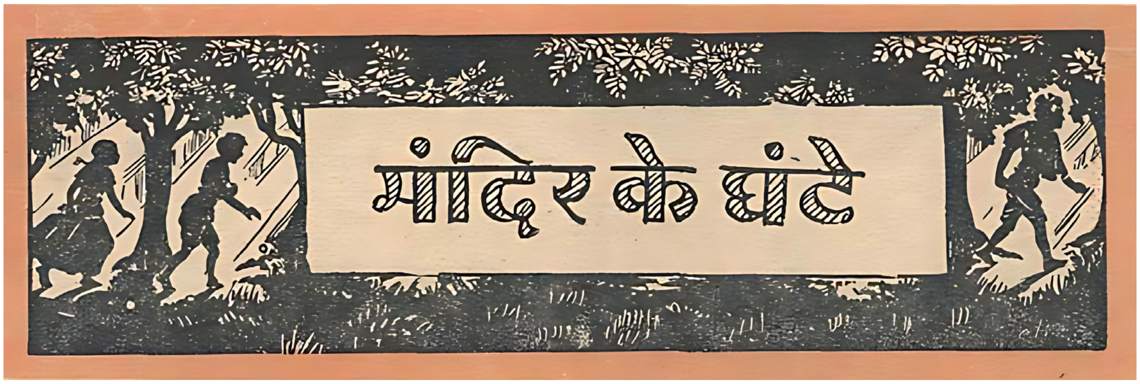
"अच्छा ! यह सब थानेदार साहब से अरज कर लेना ! चलो थाने में !" कह कर वह पुलिस वाला उसे थानेदार के पास ले गया।

थानेदार ने उसे देखते ही पहचान लिया कि कारखाने की डकैती वाला गुमाश्ता यही है। तुरन्त उसने उस पेटी का ताला तुड़वा कर देखा। सभी नोट उसमें हँस-हूँस कर भरे थे।

सब रुपए मिल गए और कल्लनराम का जुर्म साबित हो गया। अदालत जाने पर उसे सात साल की कड़ी सज़ा हुई।

मुजरिम सोचते हैं कि हम बड़े चालाक हैं, साफ साफ बच गए। लेकिन कभी न कभी संयोग से उनका जुर्म प्रगट हो ही जाता है।





मानभूम के जङ्गलों में मन्ना नाम का एक भील रहता था। पहली पत्नी से उसके एक लड़का और एक लड़की हुई। लड़के का नाम चन्ना और लड़की का नाम बेनी था। पहली पत्नी के मरने के बाद उसने दूसरा ब्याह कर लिया। मन्ना की दूसरी स्त्री को अपनी सौतेली सन्तान से नफरत थी।

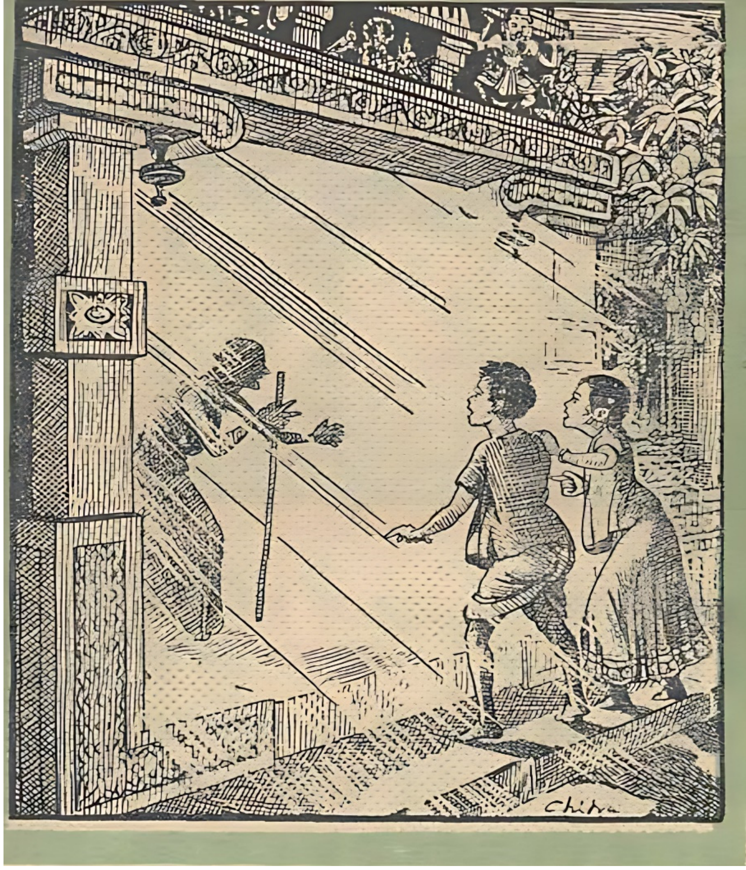
बेचारी बेनी बहुत मासूम लड़की थी। जब सौतेली माँ उसे कष्ट देती तो वह रोने लगती। तब चन्ना जो बहुत धीरज वाला था उसे तसल्ली देता और कहता-"मेरे रहते तुझे डर किस बात का बहन !"

उनकी सौतेली माँ उनसे अपना पिण्ड छुड़ाने के लिए हमेशा नए नए उपाय सोचा करती। हर दम साजिश ही रचती रहती। लेकिन वे दोनों बच्चे बड़े सब्र से सब कष्ट सह लिया करते।

एक दिन उसने अपने सौतेले बच्चों से कहा-"जङ्गल में बहुत सी जड़ी-बूटियाँ हैं ! जाकर उन्हें चुन लाओ !" यह कह कर उसने एक आदमी को साथ देकर उन्हें भेज दिया। चन्ना सिर्फ़ धीरज वाला ही न था। वह बड़ा चालाक भी था। वह बहुत दिनों से अपनी सौतेली माँ की चाल समझता आया था। वह जानता था कि जड़ी-बूटियाँ चुन लाना सिर्फ़ एक बहाना है। असल में बात कुछ और है। इसलिए उसने चुपके से कक्कड़ चुन कर जेब में भर लिए और राह में एक एक कर गिराता आया।

बीच जङ्गल में पहुँचते पहुँचते दोनों बच्चे थक गए। तब उनके साथ आए हुए आदमी ने कहा-"तुम लोग इस पेड़ की छाँह में बैठ कर अपनी थकान मिटा लो। मैं जाकर जड़ी-बूटियाँ चुन लाता हूँ।" यह कह कर वह चुपके से एक दूसरी राह से घर लौट गया। दोनों बच्चे सो गए थे। जब

खुशीराम



तक उनकी नींद टूटी, साँझ हो गई थी। थोड़ी देर में चाँद भी निकल आया। चन्ना अपनी बहन को धीरज बँधा कर घर ले चला। वह राह में जो कक्कड़ गिराता आया था वे चाँदनी में चमक कर राह दिखा रहे थे। इस तरह वह आसानी से जङ्गल पार कर घर पहुँच गया।

अपने सौतेले बच्चों को फिर लौट आया देख कर मन्ना की स्त्री बहुत बिगड़ी। उसने उन्हें भूखा-प्यासा रखा और खूब मारा-पीटा। दूसरे दिन उसने दो रोटियाँ पोटली में बाँधी और उस आदमी को साथ देकर और एक जङ्गल में भेज दिया।

इस बार चन्ना को कङ्कड़ चुनने का मौका नहीं मिला। इसलिए वह अपनी रोटी के टुकड़े टुकड़े कर राह में गिराता आया।

इस बार भी उस आदमी ने इन्हें बातों में भुला कर जङ्गल में छोड़ दिया और घर लौट गया। चन्ना को भरोसा था कि वह रोटी के टुकड़ों की निशानी के सहारे आसानी से राह जान लेगा। लेकिन साँझ को जब वे लौटने लगे तो उसे एक भी रोटी का टुकड़ा न दिखाई दिया। उन्हें चिड़ियाँ चुग गईं थीं।

अब वे भटकते भटकते बहुत दूर चले गए। अन्त में उन्हें बहुत दूर पर एक टिमटिमाती रोशनी दिखाई पड़ी। उन्होंने सोचा कि कोई घर होगा। इसलिए सीधे उसी ओर चले गए। लेकिन जाकर देखने पर मालूम हुआ कि वह घर नहीं, एक मन्दिर है। उस मन्दिर की दीवारों पर तरह तरह के चित्र बने हुए थे।

उस मन्दिर के आगे एक पेड़ था। चन्ना को भूख लग रही थी। इसलिए उसने उस पेड़ का एक फल तोड़ लिया। तुरन्त मन्दिर के घण्टे बजने लग गए और द्वार खुल गए। एक बूढ़ी औरत ने बाहर आकर कहा- "बच्चो ! आओ ! मैं तुम्हारी

ही राह देख रही थी।" यह कह कर वह बड़े प्रेम से दोनों को अन्दर ले गई। उसने माँ की तरह बड़े प्यार से उन्हें खिलाया-पिलाया और दो बिस्तर बिछा कर उन्हें सुला दिया।

रात को जब वे दोनों गाढ़ी नींद में थे तो उस बूढ़ी ने चन्ना का बिस्तर उठा ले जाकर दूसरे कमरे में लगा दिया और किवाड़ बन्द कर दिए। बेचारे भाई-बहन अलग हो गए। दूसरे दिन से वह बेनी को सौतेली माँ से भी ज्यादा सताने लगी। दोनों को कभी बात करने का मौका भी नहीं देती थी।

अजीब बात यह थी कि बूढ़ी बेनी को रूखा-सूखा खाने को देती थी। मगर चन्ना को भर पेट अच्छा माल खिलती थी। सींखचों में से यह भोजन चन्ना को पहुँचाया जाता था। बेनी ही दे आती थी। ऐसे समय चन्ना को उसे धीरज देने का मौका मिल जाता था। दोनों एक दूसरे को देख कर रो लेते थे।

बूढ़ी हर रोज़ चन्ना के कमरे के पास जाकर उसकी कुशल पूछती। "बेटा! अपना हाथ इधर दे दो तो !" कह कर वह उसका हाथ पकड़ लेती और टटोल कर देखती। चन्ना



चालाक था, इसलिए अपने हाथ के बदले एक सूखी लकड़ी पकड़ा देता। "अरे ! अभी मोटा नहीं हुआ।" यह कह कर बुढ़िया झल्लाती हुई चली जाती।

एक दिन बूढ़ी मन ही मन भुनभुनने लगी-"मोटा हो या न हो ! कल उसे जरूर निगल जाऊँगी।" इसके दूसरे दिन उसने मन्दिर के एक कोने में एक बहुत बड़ी भठ्ठी सुलगाई। वह भठ्ठी इतनी बड़ी थी कि उसमें एक आदमी आसानी से समा जाता। उस भठ्ठी के पास एक बहुत बड़ी कड़ाही भी थी। जब ये सब बातें बेनी ने अपने भाई से कह दी तो वह जान गया कि बूढ़ी

क्यों इतने दिनों से उसे इस तरह खिला-पिला रही थी ?

रात होते ही बूढ़ी ने चन्ना के पास आकर कहा-"बेटा ! आज देवी को ज़रा नैवेद्य देना है। इसलिए आओ ! ज़रा चूल्हा फूँक दो !" यह कह कर वह उसे ले गई और चूल्हे के सामने एक आसन बिछा कर उस पर बिठा दिया। तब चन्ना ने कहा-"दादी ! मैंने ऐसा चूल्हा पहले कभी नहीं देखा था। इसलिए मैं इसे नहीं फूँक सकता। पहले तुम इसे फूँक कर दिखा दो तो सही !" तब बुढ़िया ने कहा-"इतना भी नहीं जानता !" यह कह कर वह वहाँ बैठ कर चूल्हा फूँकने लगी। तुरन्त मौका देख कर चन्ना ने उसे एक ऐसी लात लगाई कि वह भठ्ठी में जा गिरी। तुरन्त चन्ना ने भठ्ठी पर ढकना लगा दिया।

बस, झट मन्दिर के घण्टे बजने लग गए। दीवारों पर के चित्र जिन्दा होकर नीचे उतर आए और चन्ना को प्रणाम करने लगे। सब लोग आकर उस भठ्ठी के पास खड़े होकर तमाशा देखने लगे। उनके देखते देखते वह भठ्ठी एक सिंहासन बन गई। उसमें से आवाज़ आई-"बुढ़िया डाइन को मारने वाले वीर ! आओ, बैठो और अपनी इच्छा बताओ !" तब सब लोगों ने जयजयकार करके चन्ना और बेनी को उस गद्दी पर बिठा दिया। चन्ना ने कहा-"हाँ, अब मैं घर लौटना चाहता हूँ।" बस, वह गद्दी देखते-देखते उड़न खटोले की तरह उड़ गई।

अपने सौतेले बच्चों को सही-सलामत घर लौटा देख कर मन्ना की दूसरी स्त्री को भेद खुलने का डर हुआ। इसलिए वह चुपचाप घर से भाग गई।

मन्ना ने अपने बच्चों को गले से लगा लिया। उसने चन्ना की बहुत बड़ाई की। उस जादू की गद्दी के प्रभाव से अब वे सुख से जीवन बिताने लगे।





किसी गाँव में एक आदमी रहता था जो नज़दीक के जङ्गल से लकड़ियाँ काट लाकर अपनी जीविका चलाता था। उसकी चन्दा नाम की एक खूबसूरत लड़की थी। चन्दा बहुत अच्छी लड़की थी। जङ्गल में जितने भूत-प्रेत और देवता रहते थे सबको वह जानती थी। वह यह भी जानती थी कि कौन से मन्तर पढ़ने से वे प्रसन्न होते हैं।

चन्दा के पड़ोस में ही मालू नाम का एक लड़का रहता था। वह उसका हमजोली था। चन्दा जितनी सीधी थी मालू उतना ही टेढ़ा, जिद्दी और क्रोधी था। चन्दा की आठवीं बरसगाँठ को उसकी माँ ने उसे एक खिलौना भेंट में दिया। चन्दा ने उसे अच्छे कपड़े पहना कर सजाया। वह उसे 'सोने की पुतली' कह कर पुकारने लगी।

एक दिन सोने की पुतली को गोद में लेकर खेलने के लिए वह जङ्गल की तरफ गई। इतने में उसे मालू दौड़ते-हाँफते नज़र आया। "क्यों मालू ! क्या बात है ? क्यों भागे जा रहे हो ?" चन्दा ने पूछा।

"कोई खास बात नहीं, एक तमाशा दिखाऊँ ?" यह कह कर मालू ने अपने कुरते के अन्दर से एक चीज़ निकाल कर दिखाई। वह एक सोने का बरतन था। उसमें अशर्फियाँ भरीं थीं और चम चम चमक रही थीं। उनको देख कर चन्दा की आँखों में चकाचौंध पैदा हो गई।

"धत्तेरी की ! तुम्हें यह कहाँ से मिल गया ? यह बौनों का खजाना है। कड़ी मेहनत करके जो कुछ कमाते हैं वे लोग इसमें डाल देते हैं। अब तुम इस को चुरा लाए हो। इससे उनके मन में कष्ट होगा और वे तुम्हारी खूब खबर लेंगे। जाकर तुरन्त जहाँ से इसे उठा लाए हो वहीं रख आओ।" चन्दा ने मालू को फटकारा। "जा ! जा !

राकेश



मैं ऐसी झूठी कहानियों पर विश्वास नहीं करता।" मालू ने लापरवाही के साथ कह कर हँस दिया। इतने में पीछे से कोई आहट हुई। मुड़ कर देखा तो सैकड़ों बौने चींटियों की तरह घेरने आ रहे थे। उनको देखते ही मालू नौ-दो ग्यारह हो गया। पीछे मुड़ कर देखा तक नहीं।

वे बौने छः अंगुल लम्बे थे। लेकिन दाढ़ी की लम्बाई बारह अंगुल से ज्यादा थी। उनकी पोशाक हरी थी और सर पर नुकीली टोपियाँ थीं। चन्दा ने उन्हें देखते ही डर के मारे आँखें मूँद लीं। जब उसने आँखें खोलीं तो देखा कि बौने उसकी सोने की पुतली छीन कर चम्पत हो गए हैं।

अब चन्दा बेचारी हक्की-बक्की सी रह गई। लेकिन थोड़ी देर बाद उसने सोचा-"मैं जानती हूँ कि बौने कहाँ रहते हैं। फिर मैं क्यों न उनके पास जाकर बिनती करूँ और सोने की पुतली माँग लाऊँ ?"

यह निश्चय करके वह तुरन्त वहाँ से चली और बौनों के बिल के पास जा पहुँची। उसने उनसे बिनती करके कहा-"ऐ बौनो ! कृपा करके मेरी सोने की पुतली मुझे लौटा दो।"

"अच्छा ! पुतली चाहिए ? तो जाओ ! हमारा सोने का बरतन हमें ला दो।" उन्होंने उसकी दिल्लगी उड़ाते हुए कहा।

अब चन्दा बहुत घबरा गई। एक ओर तो उसे दुख था कि बौने उसकी पुतली उठा ले गए। दूसरी ओर यह डर भी था कि घर जाने पर माँ जरूर पुतली के बारे में सवाल करेगी। तब वह क्या जवाब देगी ? इसलिए चन्दा सीधे घर नहीं लौटी। वहाँ से नज़दीक के एक पहाड़ पर चली गई। वहाँ उसने एक चरवाहे से अपनी राम-कहानी कह सुनाई। उसी चरवाहे से चन्दा ने बौनों और उनके खजाने की कहानी सुनी थी।

"बेटी ! तुम डरो नहीं ! लो, यह ताबीज़ अपने पास रख लो ! जब तक यह तुम्हारे पास रहेगी, बौने तुम्हारा कुछ नहीं बिगाड़ सकेंगे ! इस पर उनका जादू नहीं चलेगा। यह कह कर उसने एक ताबीज दी और कहा-"लेकिन उनसे वैर मोल लेना भी ठीक नहीं। तुम मालू से कह दो कि वह उनका सोने का बरतन लौटा दे !"

चन्दा घर चली। थोड़ी दूर जाते ही उसे एक बहुत बुरी खबर मालूम हुई। उसने सुना कि उसका साथी मालू एक गाड़ी के नीचे गिर पड़ा है और उसे बहुत चोट लगी है। "हाय ! मैंने जो सोचा वही हुआ। चरवाहे ने जो कहा वही हुआ। बौनों का शाप पड़ गया मालू पर।" चन्दा ने सोचा और बहुत रोने लगी।

लेकिन वह बेचारी क्या कर सकती थी ? आज उस पर दो सङ्कट टूट पड़े थे। एक तो उसकी सोने की पुतली बौने छीन ले गए थे। दूसरे उनके शाप की वजह से मालू गाड़ी के नीचे गिर पड़ा था और उसे चोट पहुँची थी। बेचारी सोच में पड़ी हुई थकी माँदी किसी तरह घर लौटी।



उसको देख कर उसके माता-पिता ने जो अभी मालू के घर से लौट रहे थे, कहा-"बेटी चन्दा ! तुम्हारे दोस्त मालू को बड़े ज़ोर का बुखार चढ़ आया है। वह बुखार में न जाने क्या क्या बक रहा है ? कह रहा है- 'झाड़ियों में...चन्दा से....कह देना !' क्या बात है ?झाड़ियों में क्या हुआ ? तुम कुछ जानती हो ?" चन्दा के माता-पिता ने कहा।

तब चन्दा ने बड़ी उतावली से पूछा- "और कुछ कह रहा था माँ ?" लेकिन माँ ने कहा-"नहीं !" "तो मैं उसके घर हो आती हूँ।" चन्दा ने कहा। लेकिन उसकी



माँ ने उसे जाने नहीं दिया। चन्दा को बहुत दुख हुआ। आधी रात के वक्त जब सब लोग सो रहे थे, वह चुपके से उठ कर मालू के घर चली। वहाँ जाकर उसने देखा कि मालू की

हालत बहुत सङ्गीन है। तब उसने माल की माँ से पूछा-"काकी ! भैया ने झाड़ियों के बारे में क्या कहा था ? किन झाड़ियों की बात थी ?

"बड़ के नीचे कोई झाड़ियाँ थीं।" मालू की माँ ने संक्षेप में कहा।

"अच्छा, मैं जाती हूँ। तुम सोच न करो ! भैया ज़रूर चङ्गा हो आएगा।" यह कह कर चन्दा वहाँ से सीधे उस बड़ के पास गई। वहाँ उसे झाड़ियों में वह सोने का बरतन दिखाई दिया।

वह बरतन लेकर दौड़ी हुई बौनों के बिल के पास गई। उसने उन्हें पुकारा। तुरन्त बौने बाहर दौड़े आए। उन लोगों ने उसे घेर लिया। "प्यारे बौनो ! लो अपना सोने का बरतन ! अब ऐसा करो जिससे मालू चङ्गा हो जाए।" चन्दा ने गिड़गिड़ा कर कहा।

तब उन सब बौनों ने अट्टहास करते हुए कहा-"तुम जो चाहो सो माँग लो ! लेकिन फिर कभी हमारे सामने उस मालू की चरचा न चलाना। वह बड़ा बदमाश है; शोहदा है ! हम उसे इस बार अच्छी सजा दिए बिना नहीं छोड़ेंगे।" उन लोगों ने क्रोध के साथ जवाब दिया।

तब चन्दा ने हठ करके कहा-"मेरा मालू भैया चङ्गा हो जाए ! बस, इसके सिवा मुझे और कुछ नहीं चाहिए।"

तब बौने आपस में सलाह-मशवरा करने लगे। बड़े ज़ोर से विवाद चला। आखिर किसी तरह उन्होंने चन्दा पर कृपा करके मालू की जान बचाने का निश्चय किया।

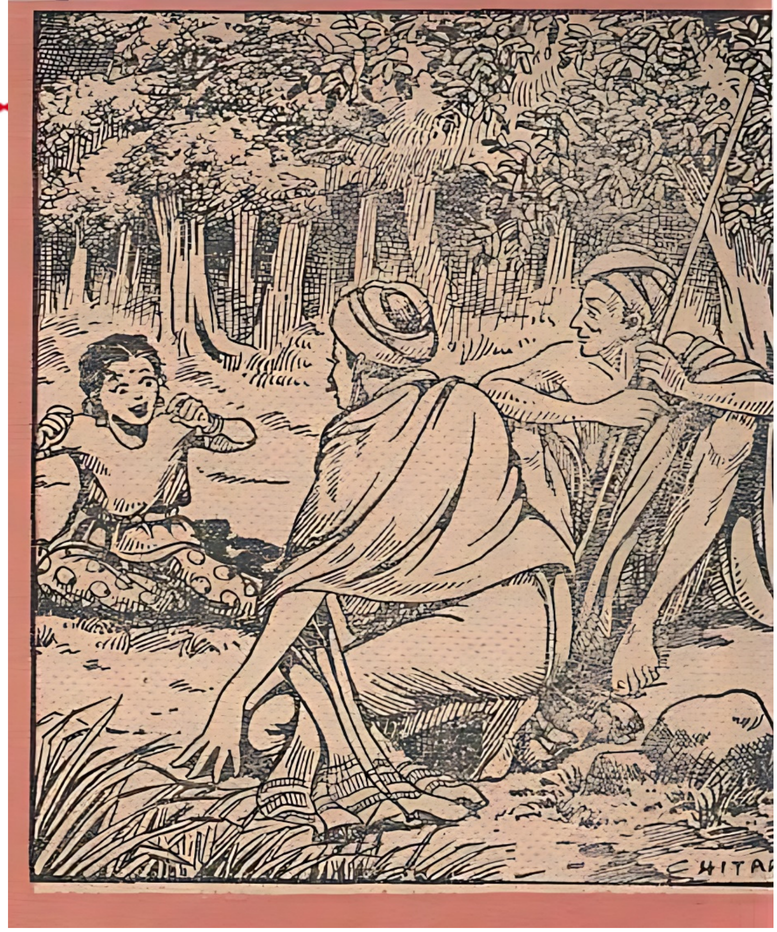
तुरन्त चन्दा को बड़े ज़ोर की नींद आ गई। वह वहीं पड़ कर सो गई। जब उसकी नींद टूटी और उसने आँखें मल कर देखा तो न बौनों का पता था, न उनके सोने के बरतन का।

तब तक सबेरा हो गया था। चन्दा सम्हल कर उठ बैठी। इतने में उसने देखा कि उसके पिता चरवाहे के साथ उसे खोजते हुए आए हैं और उसके सामने खड़े हैं।

पिता ने चन्दा को उठा कर गले लगा लिया और घर चलने को कहा। लेकिन चन्दा ने जैसे उनकी बात सुनी ही नहीं। उसने उतावली के साथ पूछा-"पिताजी ! मालू की हालत कैसी है ? कुछ सुधरी कि नहीं ?"

तब पिता ने कहा-"बेटी ! वह तो चङ्गा हो गया। वैद्यों ने कुछ ऐसी दवा दी कि वह हँसते-खेलते उठ बैठा।"

तब चन्दा ने कहा-"पिताजी ! आप पागल तो नहीं हो गए ? मालू की बीमारी वैद्य लोग क्या दूर कर सकते ? बौनों के शाप की वजह से ही उस को यह बीमारी हुई। उन लोगों ने जब अपना शाप हटा लिया तो वह



चङ्गा हो गया। यह सब बौनों का प्रभाव है; और कुछ नहीं।" लेकिन ये सब बातें उसके पिता की समझ में नहीं आईं। हाँ, उनके साथ जो चरवाहा आया था उसने सारी बात समझ ली।

पिता के बहुत गिड़गिड़ाने पर भी चन्दा उनके साथ घर नहीं लौटी। "मैं पीछे आऊँगी। आप जाइए।" उसने कहा। तब उसके पिता ने चरवाहे से कहा-"भैया ! इसे घर ले आने का भार मैं तुम्हें सौंपता हूँ। तुम भी इसके साथ रहो।" यह कह कर उसको चरवाहे के हाथ में सौंप कर उसके पिता घर लौट गए।

पिता के जाते ही चन्दा ने दौड़ कर बौनों के बिल के पास जाकर उन्हें पुकारा। तुरन्त वे सब बाहर निकले और दौड़ कर चन्दा के पास आए। "प्यारे बौनो ! मैंने तुम्हारा बरतन तो लौटा दिया। फिर तुम लोग क्यों मुझ पर गुम्सा रखते हो ? कृपया मेरी सोने की पुतली मुझे लौटा दो। उसके बिना मैं एक पल भी नहीं जी सकती।" उसने गिड़गिड़ा कर कहा।

तब उन लोगों ने कहा-"चन्दा ! तुमने सोने का बरतन लौटा दिया तो कौन सा बड़ा एहसान किया ? यह तो अपनी भूल सुधारना था। इसी से तो मालू चङ्गा हो गया। अच्छा, तुम बहुत गिड़गिड़ा रही हो। इसलिए सुनो, एक काम करो। हम तुम्हें एक गाना सुनाते हैं । उसे तुम्हें जल्दी जल्दी तीस बार गाकर सुनाना होगा। अगर एक भी गलती तुमने नहीं की तो हम तुम्हें सोने की पुतली लौटा देंगे।" यह सुन कर चन्दा ने बड़ी खुशी से पूछा-"कौन सा गाना है वह ?" तब बौनों ने सुनाया-

"वाला - ऊला - जाला - काला !

माषा - माषी हो......!

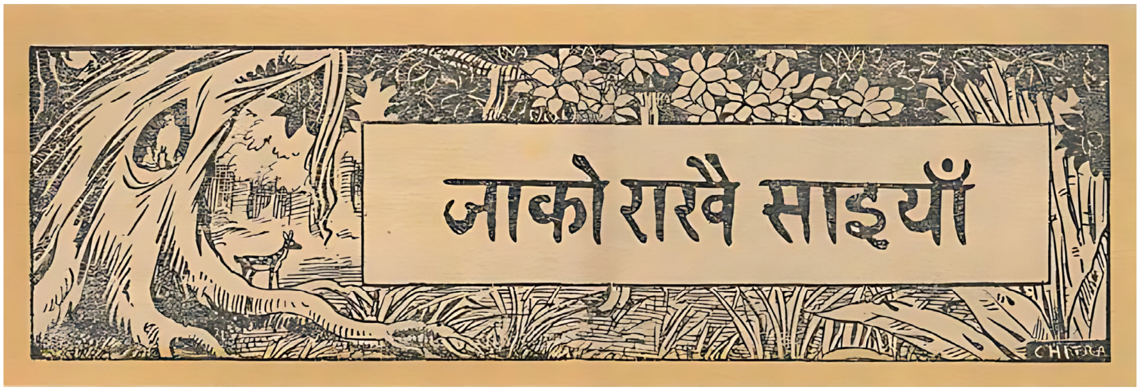
चंफा - हंफा, मंफा- तंफा

ऊफी - फाफी हो.....!"

चन्दा ने वह गाना सही सही गाने की बहुत कोशिश की। लेकिन वह न गा सकी। र बार कोई न कोई गलती हो ही गई।

"तुम यह गाना जब सही सही गा सकोगी तो लौट आना। तुम्हें सोने की पुतली लौटा देंगे।" यह कह कर बौने भाग कर बिल में घुस गए। वह गाना सही सही गाए बिना सोने की पुतली नहीं मिल सकती थी। इसलिए चन्दा ने मन लगा कर अभ्यास करना शुरू किया और वह आज तक उसी तरह अभ्यास कर रही है।





एक शहर की सीमा पर एक बड़ा पीपल का पेड़ था। उस पेड़ के तने में एक खोखला था। उस खोखले में एक चिड़ियाँ का घोंसला था। चिड़ियाँ ने अण्डे दिए थे और वह उनको से रही थी। कुछ दिन बाद बच्चे निकल आए। लेकिन उनके पर अभी नहीं जमे थे। इसलिए चिड़ियाँ रोज़ जङ्गल जाकर चारा ले आती और उन्हें चुगाती थी। जङ्गल जाते समय चिड़ियाँ रोज़ एक हिरन को उस पेड़ के नीचे उछलता कूदता देखती थी। वह हिरन आस-पास की हरी-भरी घास चरता था। पास ही झरने का पानी पीकर अपना पेट भर लेता और निश्चित होकर दिन बिताता था। बेचारा किसीका कुछ बिगाड़ता नहीं था।

जब जब चिड़ियाँ हिरन को देखती तब तब उसके दिल में एक हूक-सी उठ जाती। क्योंकि जब वह चारा लाने जाती तो अक्सर तीर-कमान लिए व्याधे को जङ्गल में घूमते देखती थी।

तब वह सोचने लग जाती थी-"इन लोगों की नजर कहीं उस हिरन पर न पड़ जाय ! अगर ऐसा हुआ तो गज़ब हो जाएगा।"

एक दिन जब वह जङ्गल जा रही थी उसने हिरन को पास बुला कर कहा-"प्यारे दोस्त ! एक बात शायद तुमको मालूम नहीं। आजकल जङ्गल में जहाँ देखो वहीं यमदूतों की तरह ब्याध घूमते दिखाई देते हैं। इसलिए तुम जरा सावधान रहो ! जहाँ तहाँ चौकड़ी मत भरते फिरो ! कुछ दिन तक झड़ियों में ही छिप कर उछलो-कूदो !" उसने चेतावनी दी।

हिरन ने हँस कर कहा-"काकी ! मैं जानता हूँ, तुम प्रेम के कारण ही ऐसा कह रही हो। लेकिन सुनो, हम जैसे निरपराध जीवों की भगवान ही स्वयं रक्षा करता है। इसलिए चिन्ता की कोई बात नहीं।"

श्यामसुन्दर



इस पर चिड़ियाँ ने फिर चेताया-"अरे ! ऐसी बातों में क्या रखा है ? खबरदार ! मेरी बात पर गौर करो !" यह कह कर चिड़ियाँ चारे की खोज में चली गई।

हिरन और चिड़ियाँ में जो बातचीत हुई उसे झाड़ी में छिपे हुए एक साँप ने सुन लिया। दोनों के जाने के बाद वह ठठा कर हँसने लगा। एक बिच्छू ने उसको हँसते देख कर पूछा-"दादा ! क्या बात है ? क्यों इस तरह ज़ोर-ज़ोर से हँस रहे हो ?" साँप ने, हिरन और चिड़ियाँ में जो बातचीत हुई थी, कह सुनाई और कहा-"भैया ! सुन लिया न ! चिड़ियाँ चली है हिरन को उपदेश देने ! वह अपने को बड़ी होशियार मानती है ! उसके ऊपर क्या आने वाला है, इसका तो उसे पता ही नहीं ! चली है दूसरों को उपदेश देने ! बच्चों को घोंसले में छोड़ कर यों ही बेपरवाह चली जाती है !" इतना कह कर वह फिर हँसने लगा।

बिच्छू की समझ में न आया कि वह क्यों हँस रहा है। इसलिए उसने पूछा-"बच्चे तो घोंसले में सही-सलामत हैं ! माँ के आने के पहले वे जाएँगे कहाँ ?"

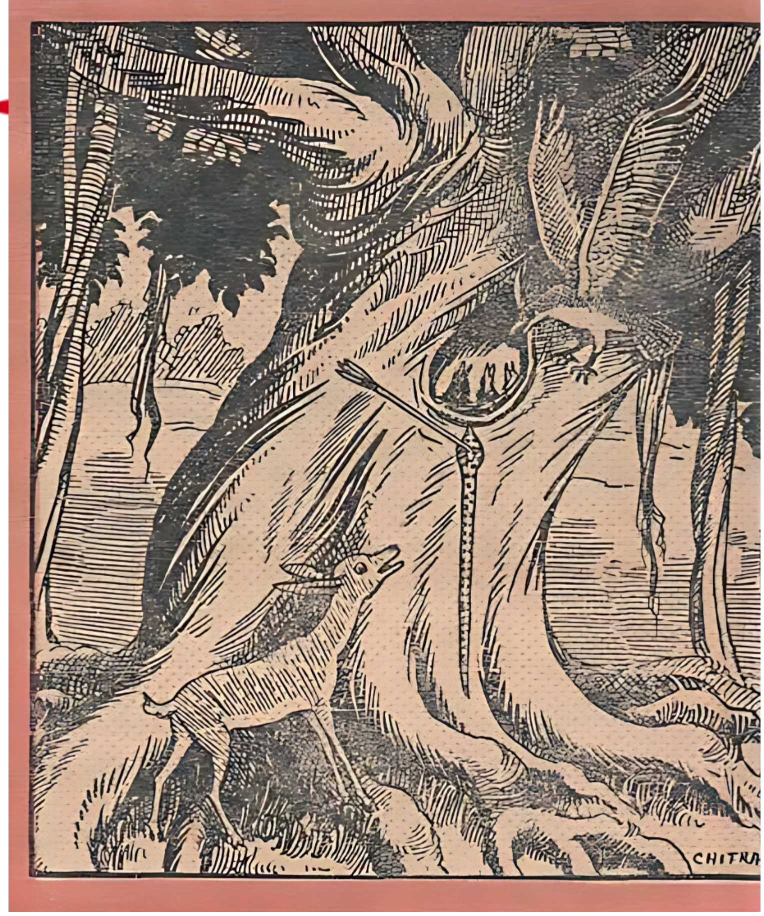
तब साँप ने जवाब दिया-"बस, यही है तुम्हारी अक्ल ? बच्चे और कहाँ जाएँगे ? जाएँगे मेरे लम्बे पेट में !" तब बिच्छू की समझ में आई कि बात क्या है। "वाह, अच्छी सोची तुमने !" यह कह कर वहाँ से चलता बना।

थोड़ी दूर जाने पर बिच्छू को एक व्याध दिखाई दिया। व्याध ने बिच्छू की ओर नहीं देखा। क्योंकि उसका सारा ध्यान सामने के पीपल के पेड़ पर लगा हुआ था। इतने में उसकी नज़र हिरन पर पड़ी जो झरने में पानी पीने गया था और पीपल की छाँह में लेटने आ रहा था। व्याध ने झट कमान पर तीर चढ़ाया और निशाना साध कर हिरन पर छोड़ना ही चाहा कि हठात् उसका पैर बिच्छू पर पड़ गया।

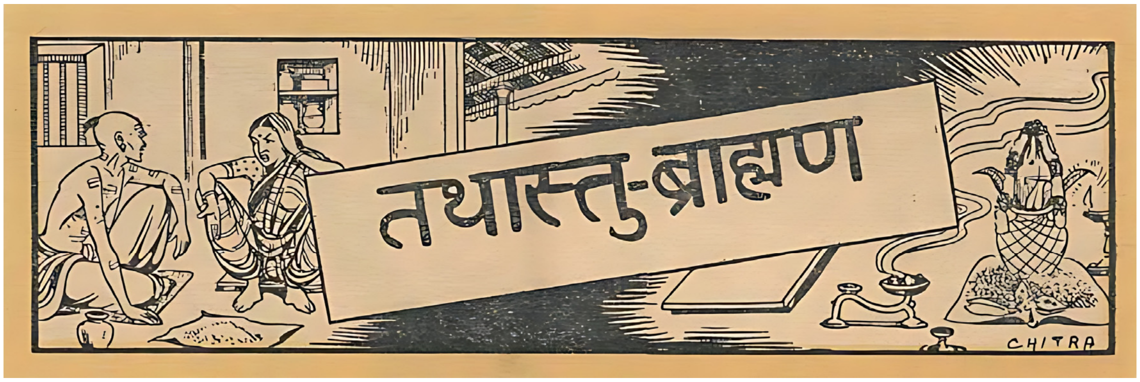
बिच्छू ने ज़ोर से डक मारा। "बाप रे ! बाप !" वह चीख कर पैर पकड़ कर बैठ गया। निशाना चूक गया और हिरन को न लग कर तीर पीपल के तने में चुभ गया। चारा लेकर लौटने पर चिड़ियाँ ने देखा कि हरिन आराम से पेड़ की छाँह में लेटा हुआ है। "क्यों दोस्त! खैरियत तो है ? आज तो व्याध को देख कर मैंने सोचा कि फिर कभी तुम्हें देख नहीं सकूँगी।" चिड़ियाँ ने कहा।

"तुम्हारा कहना सच है काकी ! तुम्हारे जाने के बाद एक ऐसी घटना हो भी गई। एक तीर मेरे ऊपर से सनसनाता गया और तने में चुभ गया। मैं बाल-बाल बच गया।" हिरन ने जवाब दिया।

तीर की बात सुनते ही चिड़ियाँ के दिल में खलबली मच गई। "कहीं वह तीर मेरे घोंसले में तो नहीं गया ?" उसने सोचा और अपने घोंसले की तरफ चली। वहाँ जाकर उसने देखा कि तीर घोंसले के नीचे तने में चुभा हुआ है। और भी ध्यान से देखने पर पता चला कि तीर ने एक साँप को वेध डाला है और वह मरा साँप तीर के साथ लटक रहा है। ऐसा लगता है जैसे साँप पेड़ से चिपट गया हो।



यह देखते ही चिड़ियाँ चिल्ला उठी। उसने हिरन को बुलाया और उस साँप की ओर इशारा किया। तब हिरन ने कहा-"काकी ! तुम ने कहा था-'ऐसी बातों में क्या रखा है ?' लेकिन देखो ! मैंने जो कुछ कहा वह सच साबित हुआ। निरपराधियों की रक्षा करनेवाले भगवान ने आज मेरी और तुम्हारे बच्चों की रक्षा की है। देखो, भगवान की लीला कैसी विचित्र है ! जो तीर मुझे मारने के लिए छोड़ा गया था उसी तीर से उसने उस दुष्ट साँप को मरवाया, जो तुम्हारे बच्चों को मारने आ रहा था। इसलिए याद रखो-'जाको राखे साइयाँ मारिन सक्कै कोय। बाल न बाँका करि सकै जो जग बैरी होय !'"



एक गाँव में एक पोखर है। उस पोखर के चारों ओर ब्राह्मणों के घर हैं। उन ब्राह्मणों में बहुत से ऐसे हैं जो मन्त्र - श्लोक वगैरह अच्छी तरह जानते हैं। नामकरण उत्सव से लेकर विवाह और श्राद्ध तक सब कुछ करा सकते हैं। इसलिए उनकी आमदनी भी अच्छी है।

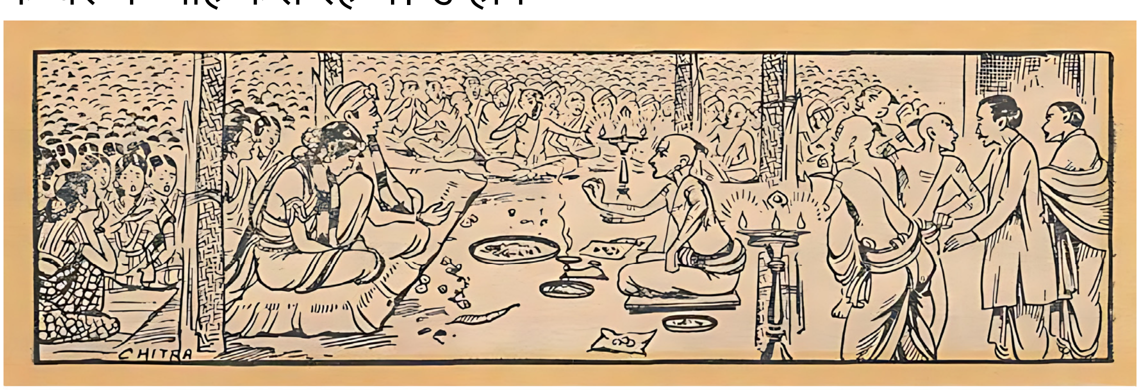
इन पुरोहितों के अलावा एक सौ के करीब और ब्राह्मण हैं। ये बेचारे मन्त्र-श्लोक वगैरह कुछ नहीं जानते। फिर भी मुश्किल से अपना पेट पाल लेते हैं। जब किसी घर में कोई शुभ अवसर आ जाता है तो ये भी वहाँ उपस्थित हो जाते हैं। जब पुरोहित और पण्डित लोग मन्त्र पढ़ते हैं तो ये पीछे से 'तथास्तु ! तथास्तु !' कहते रहते हैं। ये बेचारे उस एक शब्द के अलावा और कुछ नहीं जानते। इस तरह 'तथास्तु' कह देने से उन्हें उस जून भर पेट भोजन मिल जाता है और दान-दक्षिणा के रूप में कुछ पैसे ऊपर से मिल जाते हैं। इनका काम हर जगह जाकर 'तथास्तु' कहना है। इसलिए सब लोग इनको 'तथास्तु- ब्राह्मण' कह कर पुकारते हैं। उन्हें कहीं भी एकाध आने से ज्यादा नहीं मिलता और दिन में चार-पाँच आने से ज्यादा आमदनी नहीं होती। इन्हीं 'तथास्तु-ब्राह्मणों' में से एक का नाम नगेन्द्र पण्डित था। बेचारे की उमर चालीस साल की हो गई थी। लेकिन अभी तक रुपया कुछ भी जुटा नहीं सके थे। जो कुछ कमाते खाने-पीने में चला जाता। आखिर एक दिन उनकी पत्नी लक्ष्मी को क्रोध आ गया और उसने कहा-"अजी! सभी ब्राह्मण तो रोज़ दस-दस पन्द्रह-पन्द्रह रुपए कमा लाते हैं। 'तथास्तु तथास्तु' कह कर कितने दिन समय काटिएगा ? आप कोई काम क्यों नहीं करते ?

कुमारी नलिनी

इस तरह दो-तीन आने कमा लाने से काम कैसे चलेगा ? बुढ़ापे में हम लोग क्या करेंगे ?" यह कह कर वह रोने-पीटने लगी।

पत्नी की ये बातें सुन कर नगेन्द्र पण्डित को गुस्सा आ गया। वे तुरन्त घर से निकले और परदेश चले गए। वहाँ उन्होंने बड़े-बड़े पण्डितों के पास रह कर सब तरह के मन्त्र-श्लोक सीख लिए और घर लौट आए। अब चारों ओर उनका नाम फैल गया। लोग कहने लगे कि नगेन्द्र पण्डित बड़े विद्वान हैं। कोई ऐसा मन्त्र नहीं, जो वे नहीं जानते। अब बड़े-बड़े अमीर लोग उनको अपने घर पुरोहिताई करने के लिए बुलाने लगे। सब जगह से उन्हें न्यौते आने लगे। यह देख कर वहाँ के दूसरे पण्डित-पुरोहित उनसे जलने लगे। उन्होंने सोचा-"यह कितना बड़ा बन गया है ?" और मन ही मन उसका नाम सुनते ही कुढ़ने लगे। एक दिन नगेन्द्र पण्डित एक अमीर के घर में ब्याह करा रहे थे। उन्होंने सब मन्त्र अच्छी तरह पढ़े। लेकिन पढ़ चुकने के बाद उन्होंने अपनी पुरानी आदत के मुताबिक 'तथास्तु' कह दिया। ऐसा उन्हें नहीं करना चाहिए था। बाकी पण्डित जो उनसे खार खाए बैठे थे और उन्हें अपढ़ और मूरख साबित करने की कोशिश में थे, तुरन्त उन्हें आड़े हाथों लेने लगे। आखिर उन्होंने जजमान से कहा कि "यह तथास्तु कहने के सिवा कुछ नहीं जानता। सभी मन्त्र गलत पढ़ रहा है।" तब जजमान ने नगेन्द्र पण्डित को निकाल दिया।

जब वे घर पहुँचे और सारा हाल पत्नी से कहा तो वह बोली-"पढ़ने-लिखने से क्या होता है ? कुत्ते की दुम भी कहीं सीधी होती है ? जाइए, फिर घर-घर भटकिए और तथास्तु कहते फिरिए।" यह कह कर उसने खूब फटकारा। उस दिन से नगेन्द्र पण्डित फिर से तथास्तु ब्राह्मण बन गए।





नेपाल में किसी समय शमशेर जङ्ग राना नाम के एक जमींदार रहते थे। उनकी जमींदारी में से होकर एक नदी बहती थी। उस नदी में अनेकों सङ्गमरमर के शिव लिङ्ग बह आते थे। वे सब लिङ्गों को चुनवा कर एक जगह तरीके से रखवा देते थे। यह बात सब लोग जानते हैं कि शिवजी के भक्तों को शिव-लिङ्गों से बहुत प्रेम होता है। इसलिए जगह जगह से शिव-भक्त लोग आते और इन जमींदार साहब से एक एक शिव-लिङ्ग माँग ले जाते। वे अपने घर ले जाकर उसकी पूजा-प्रतिष्ठा करते थे। इस तरह जमींदार के पास जितने सुन्दर शिव लिङ्ग थे सब बँट गए। आखिर एक ही बचा रहा।

एक बार बसवेश्वर नाम के शिवजी के एक परम भक्त दक्षिण भारत से राना के यहाँ आए। राना ने उनकी बहुत खातिर की और पूछा कि "मैं आपकी क्या सेवा कर सकता हूँ ?" तब उस भक्त ने कहा कि "मैं आपसे एक शिव-लिङ्ग माँगने आया हूँ।" तब राना ने अपने पास जो एक ही लिङ्ग बच रहा था वह उन्हें दे दिया।

यह देख कर बसवेश्वर को बहुत खुशी हुई। क्योंकि राना चाहता तो देने से इन्कार कर देता और कह सकता कि "मेरे पास एक ही बचा है; मैं नहीं दूँगा।" इसलिए उन्होंने जाते समय अपनी झोली में से एक पीतल की पेटी निकाल कर राना को दी और कहा-"शमशेर जी ! इस पेटी में एक भूत है। तुम जो कुछ हुकुम दोगे वह बजा लावेगा ! जब तुम चाहो इस भूत को आज्ञा दो और अपना काम करवा लो !" यह कह कर वे चले गए।

उनके बात की सचाई जानने के लिए राना ने तुरन्त उस पेटी को एक तख्ते पर रखा और कहा- "ऐ भूत ! आकर मेरे

धनेश्वर प्रसाद

नहाने के लिए पानी गरम करो।" उनके इतना कहते ही उस पेटी में से छः अंगुल का एक बौना बाहर निकला। बाहर आकर देखते-देखते वह एक विशाल-काय राक्षस बन गया। उसने पलक मारते स्नानागार में जाकर पानी गरम कर दिया और लौट कर राना के सामने विनय से हाथ बाँध कर खड़ा हो गया।



राना ने सोचा-"यह तो खूब रहा।" अब वे हरेक काम उस भूत से करवाने लगे। घर का काम, रसोई, सौदा-सुलुफ, कपड़े धोना, हज़ामत वगैरह सभी काम अब वह भूत ही करने लगा ! इससे उस घर के सब नौकर एक बारगी बेकार हो गए।

तब राना ने कहा-"तुम सब जाकर बाहर और कहीं काम ढूँढ़ लो।" लेकिन यह सुन कर वे सब उनके पैरों पर गिर पड़े और कहने लगे- "सरकार ! आप हमें मत निकालिए। आगे से हम और भी मन लगा कर काम करेंगे। जब हमसे कोई काम नहीं होगा तो वह भूत से करवा लीजिएगा।" वे लोग बहुत गिड़गिड़ाने लगे। तब जमींदार साहब को तरस आ गया। उन्होंने सोचा-"ये बेचारे अब कहाँ जाएँगे ?" यह सोच कर उन्होंने भूत को पेटी में बन्द करके पेटी को अलमारी में रख दिया। पहले की तरह नौकर ही उनका सब काम करने लगे।

उन नौकरों में सब से आलसी था रामू माली ! जब मालिक उससे कोई काम करने को कहते तो वह खुद नहीं करता, बल्कि दूसरों से करवाता। लेकिन हरेक का अपना अपना अलग काम था। फिर उन्हें फुरसत कहाँ कि हमेशा इसका काम कर देते रहें ? फिर उनका मन चाहे भी कैसे ?

एक दिन मालिक ने बाड़ी में एक पौधा रोपने के लिए रामू को गढ़ा खोदने का



हुकुम दिया और कहीं बाहर चले गए। अपने दस्तूर के मुताबिक रामू ने वह काम किसी दूसरे को सौंपना चाहा। लेकिन उस दिन किसी ने उसकी बात न मानी। सब ने कहा- "'तुम भी तो मालिक का नमक खाते हो। तुम्हीं क्यों नहीं कर लेते ? हमें फुरसत कहाँ है ? जाओ ! जाओ !"

आलसी लोग घर बैठे बैठे खूब बातें बघारते हैं। लेकिन जब काम करने का वक्त आता है तब बगलें झाँकने लगते हैं। इसलिए निपट आलसी रामू माथा-पच्ची करने लगा कि यह काम किससे कराया जाए ? उसे यह नहीं सूझा कि खुद जाकर कर ले।

थोड़ी देर तक सोचने के बाद उसके मन में एक अच्छा उपाय सूझ गया। वह वह तुरन्त उठ कर घर के अन्दर गया और भूत वाली पेटी जिस अलमारी में थी उसके सामने खड़े होकर राना की आवाज़ में बोला-"ऐ भूत ! तुम जाकर बाड़ी में एक गढ़ा खोदो !"

तुरन्त भूत बाहर आया। उसने अपनी काया बढ़ा कर रामू की ओर देखा और गरज कर कहा-"बदमाश ! तूने मुझे बुलाया ! मैंने सोचा- मालिक बुला रहा है !" यह कह कर वह क्रोध से दाँत पीसने लगा। रामू थर्रा गया। लेकिन भूत को बाहर आने पर हुकम बजा लाना ही था। इसलिए वह फावड़ा लेकर बाड़ी में गया।

रामू को पहले तो डर लगा। लेकिन पीछे खुशी हुई कि काम उसने टाल दिया। उसे अपनी चतुराई पर गर्व भी हुआ। भर-पेट खा लेने की वजह से उसे बैठे बैठे झपकी आने लगी। सामने ही मालिक की पलङ्ग थी। वह उस पर लेट गया।

देखो तो उसका साहस ? वह मालिक की पलङ्ग पर लेट गया। उसने सोचा-



"मालिक थोड़े ही देखने आते हैं ? उनके आने के पहले ही उठ जाऊँगा !" लेकिन लेटते ही उसे गाढ़ी नींद आ गई। लोग कहते भी हैं कि आलसी लोगों को नींद प्यारी होती है। बस, वह खर्राटे लेने लगा। जब धीरे धीरे दो बज गए और वह नहीं जागा तो उधर से जाते हुए रसोइए ने उसे देख कर नाक पर उँगली धर ली। उसे डर भी लगा कि मालिक देख लेंगे तो उसकी नौकरी चली जाएगी। इसलिए उसने अपने हाथ के तपते हुए कलछुल से रामू को दाग दिया।

बस, रामू हड़बड़ा कर उठ बैठा। तुरन्त गढ़े का ख्याल आया तो वैसे ही बाड़ी में दौड़ा। वहाँ जाकर क्या देखा उसने ? सामने एक बहुत गहरा गढ़ा था। (गढ़ा क्या, वह तो खन्दक थी !) उस के अन्दर भूत दिखाई नहीं देता था और वह अभी खोद ही रहा था। यह देख कर रामू का कलेजा दहल गया। वह चिल्लाया-"अरे भैया ! मैने कहा- छोटा सा गढ़ा खोदने को और तूने पूरी बाड़ी ही खोद डाली। अरे, जमींदार साहब के महल की बुनियाद भी हिल गई है तुम्हारे गढ़े के मारे ! आओ बाहर ! अब मत खोदो।"

लेकिन भूत ने गुर्रा कर कहा-"तुम कौन होते हो रोकने वाले ? जब तक मालिक नहीं कहेंगे तब तक मैं नहीं रुकूँगा। जा ! नहीं तो चबा जाऊँगा !"

उसकी आवाज सुन कर घर के नौकर-चाकर दौड़े आए। उनको सारा हाल मालूम हुआ। बङ्गाल की खाड़ी सा वह गढ़ा देख कर वे लोग छाती पीटने लगे। "एक पल भी देरी करोगे तो मालिक का महल उस खन्दक में गिर जाएगा ! जाओ, तुरन्त

मालिक को बुला लाओ !" यह कह कर उन्होंने रामू को खदेड़ा।

उसी समय राना घर लौट रहे थे। रामू को दौड़ते-हाँफते आते देख कर उन्होंने पूछा-"बात क्या है !" तब रामू ने कहा-"हुजूर! आपका महल ढह रहा है। आइए ! दौड़े आइए !" यह कह कर उलटे पाँव लौटने लगा। उसके पीछे पीछे राना भी दौड़ते आए और वह भयङ्कर खन्दक देखी। उनके अचरज का ठिकाना न रहा। उन्होंने भूत को तुरन्त बाहर आने का हुकुम दिया और वह महल उठा कर दूर रख आने को ले कहा। भूत ने महल को उठा कर दूर रख दिया जिससे सङ्कट टल गया।

भूत ने तब रोनी सूरत बना कर, सिर झुका कर, खड़े रामू की तरफ एक जलती निगाह फेंकी और पेटी में प्रवेश करके ढकना बन्द कर लिया।

नौकरों के द्वारा राना ने सारी कहानी सुनी। अन्त में उन्होंने रामू से कहा-"खड़ा खड़ा क्या देखता है ? फावड़ा लेकर गढ़ा पाट क्यों नहीं देता ?"

रामू ने थर-थर काँपते हुए जवाब दिया-"हुजूर ! क्या मैं अकेला यह काम पूरा कर सकूँगा ? इसके पाटने में तो मुझे बरसों लग जाएँगे।"

"लगने दो ! तेरे जैसे आलसी की यही सजा है। जो काम टालना चाहता है उस पर दया नहीं दिखानी चाहिए ! फावड़ा !" उन्होंने गरज कर कहा। रामू के मुँह से बात तक न निकली। वह फावड़ा लेकर पहाड़ जैसी उस मिट्टी की ढेरी पर चलाने लगा और वह गढ़ा पाटने की कोशिश करने लगा। लेकिन बरसों ऐडी-चोटी का पसीना एक करने पर भी वह गढ़ा पटता नहीं।





रङ्गीन चित्र - कथा चित्र — ४